तात्पर्य

जो योगी सीधे भगवान् श्रीकृष्ण को न भजकर परोक्ष मार्ग से वही लक्ष्य प्राप्त करने के लिए प्रयत्न करते हैं, उन्हें भी अन्त में परम लक्ष्य—श्रीकृष्ण की ही प्राप्ति होती है। जैसा स्वयं भगवद्गीता में कथन है, ''अनेक जन्म-जन्मान्तरों के बाद कहीं जाकर ज्ञानी यह जानकर मेरी शरण लेता है कि मैं वासुदेव ही सर्वव्यापक हूँ।'' अनेक जन्मों के बाद जब मनुष्य पूर्ण ज्ञान को प्राप्त होता है, तब वह भगवान् श्रीकृष्ण की शरण में जाता है। इन दोनों श्लोकों में कही पद्धति के अनुसार ईश्वर-प्राप्ति के साधक को इन्द्रियसंयम तथा जीवमात्र का हित और सेवा कार्य करना आवश्यक है। इस प्रकार यह निष्कर्ष निकलता है कि भगवान् श्रीकृष्ण के उन्मुख होना सभी के लिए आवश्यक है। इसके बिना परमसत्य की पूर्ण अनुभूति नहीं हो सकती। प्रायः कठोर तप के बाद ही कहीं जाकर जीव उनके चरणों में सर्वात्मसमर्पण कर पाता है।

जीव के अन्तर्यामी परमात्मा की अनुभूति के लिये देखना, सुनना, चखना जैसी इन्द्रियक्रियाओं से विरत होना होगा। ऐसा करने पर परमात्मा की सर्वव्यापकता जानी जाती है। जिसे यह अनुभूति हो जाती है, वह किसी भी जीव से ईर्ष्या-द्वेष नहीं करता। उसके लिए मनुष्य और पशु में कोई भेद नहीं रहता; वह सब में आत्मा का दर्शन करता है, देहरूपी बाह्य वस्त्र का नहीं। परन्तु साधारण लोगों के लिए निराकार अनुभूति की यह पद्धति निश्चित रूप से अति कठिन है।

क्लेशोऽधिकतरस्तेषामव्यक्तासक्तचेतसाम्।
अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं देहवद्भिरवाप्यते।।५।।

m Jmb

क्लेशः=कष्ट (परिश्रम); **अधिकतरः**=विशेष है; **तेषाम्**=उन; **अव्यक्त**=निराकार में; **आसक्तचेतसाम्**=आसक्त चित्त वालों को; **अव्यक्ता**=अव्यक्त विषयक; **हि**=निस्सन्देह; **गतिः**=गति; **दुःखम्**=दुःखपूर्वक; **देहवद्भिः**=देहाभिमानियों को; **अवाप्यते**=प्राप्त होती है।

अनुवाद

परन्तु जिनका चित्त परमसत्य के निराकार-निर्विशेष स्वरूप में आसक्त है, उनके लिए पारमार्थिक उन्नति करने में विशेष कष्ट है, क्योंकि देहाभिमानियों को यह अव्यक्त विषयक गति अत्यन्त कठिनाई से प्राप्त होती है।।५।।

तात्पर्य

जो योगी श्रीभगवान् के अचिन्त्य, अव्यक्त, निराकार स्वरूप की उपासना करते हैं, उन्हें ज्ञानयोगी कहा जाता है तथा पूर्ण कृष्णभावनाभावित होकर भक्तियोग के परायण मनुष्य भक्तियोगी कहलाते हैं। यहाँ ज्ञानयोग और भक्तियोग का अन्तर स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त हुआ है। ज्ञानयोग से भी अन्त में परम लक्ष्य की प्राप्ति हो जाया करती है, किन्तु साधन-अवस्था में यह पथ बहुत कष्टपूर्ण है। इसकी अपेक्षा, भक्तियोग, अर्थात् साक्षात् श्रीभगवान् की सेवा का पथ सुगम होने के साथ ही बद्धजीव का स्वाभाविक धर्म भी है। जीव अनादि काल से बद्ध है। उसके लिये केवल